International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भारत में महिला सशक्तिकरण: प्राचीन काल से आधुनिक काल

डॉ.ममता रानी[1], रीतू रानी[2]

[1]एसोसिएट प्रोफेसर, महालक्ष्मी कॉलेज फार गर्ल्स, दुहाई गाजियाबाद
[2]एम.एड. छात्रा, महालक्ष्मी कॉलेज फार गर्ल्स, दुहाई गाजियाबाद

प्रस्तावना:

महिला सशक्तिकरण के लिए कमाई और शिक्षा दोनों महत्वपूर्ण कारक हैं। यह संभव हो सकता है कि एक महिला अकुशल काम में शामिल हो (उदाहरण के लिए नौकरानी लेकिन वह अभी भी सशक्त नहीं है। इसके विपरीत यह संभव हो सकता है कि एक महिला शिक्षित हो। लेकिन फिर भी वह सशक्त नहीं है क्योंकि वह कमा नहीं रही है. इसलिए, महिला सशक्तिकरण के लिए वित्तीय स्वतंत्रता महत्वपूर्ण है। जो महिलाएं शिक्षित और कमाने वाली हैं, वे हमारे समाज में अशिक्षित महिला श्रमिकों की तुलना में कहीं बेहतर स्थिति में हैं। भाविक रूप से जब हम भारत में महिला सशक्तिकरण के बारे में बात करते हैं तो हम यह कहते हैं कि महिलाओं को अपने अधिकारों जैसे वोट देने का अधिकार, संपत्ति के अधिकार, आंदोलन की स्वतंत्रता, उनके कानूनी अधिकार और कई अन्य अधिकारों के बारे में जागरूक होना चाहिए, जिसका अर्थ है महिलाओं को सशक्त बनाना। महिलाओं को उनके आत्म मूल्य अपनी पसंद निर्धारित करने की उनकी क्षमताओं का एहसास कराना और ऐसे समाज को आकार देना जहां महिलाएं अन्य मनुष्यों की तरह ही अपने सम्मान और अधिकारों का आनंद ले सकें। महिला सशक्तिकरण एक आवश्यक कारक है जो समाज, समुदाय और देश की भलाई और विकास के लिए काम करता है।

Keywords: महिला सशक्तिकरण, समाज, महिलाएं शिक्षित, अधिकार

प्रस्तावना: महिला सशक्तिकरण के लिए कमाई और शिक्षा दोनों महत्वपूर्ण कारक हैं। यह संभव हो सकता है कि एक महिला अकुशल काम में शामिल हो (उदाहरण के लिए नौकरानी लेकिन वह अभी भी सशक्त नहीं है। इसके विपरीत यह संभव हो सकता है कि एक महिला शिक्षित हो। लेकिन फिर भी वह सशक्त नहीं है क्योंकि वह कमा नहीं रही है. इसलिए, महिला सशक्तिकरण के लिए वित्तीय स्वतंत्रता महत्वपूर्ण है। जो महिलाएं शिक्षित और कमाने वाली हैं, वे हमारे समाज में अशिक्षित महिला श्रमिकों की तुलना में कहीं बेहतर स्थिति में हैं। भाविक रूप से जब हम भारत में महिला सशक्तिकरण के बारे में बात करते हैं तो हम यह कहते हैं कि महिलाओं को अपने अधिकारों जैसे वोट देने का अधिकार, संपत्ति के अधिकार, आंदोलन की स्वतंत्रता, उनके कानूनी अधिकार और कई अन्य अधिकारों के बारे में जागरूक होना चाहिए, जिसका अर्थ है महिलाओं को सशक्त बनाना। महिलाओं को उनके

आत्म मूल्य अपनी पसंद निर्धारित करने की उनकी क्षमताओं का एहसास कराना और ऐसे समाज को आकार देना जहां महिलाएं अन्य मनुष्यों की तरह ही अपने सम्मान और अधिकारों का आनंद ले सकें। महिला सशक्तिकरण एक आवश्यक कारक है जो समाज, समुदाय और देश की भलाई और विकास के लिए काम करता है। जब दुनिया में महिलाओं की आबादी निर्दिष्ट करने की बात आती है तो हमें लगभग का परिणाम मिलता है। लेकिन जब हम भारत के लोगों पर ध्यान केंद्रित करते हैं तो यह अनुपातहीन लिंगानुपात होता है, जिसका अर्थ है कि महिला आबादी पुरुषों की तुलना में कम है। तुलनात्मक रूप से दुनिया का पश्चिमी भाग महिला सशक्तिकरण को लेकर बहुत उदार है लेकिन लैंगिक पूर्वाग्रह के कारण भारत में महिला सशक्तिकरण समाज के लिए सबसे कम चिंता का विषय है। ऐसा माना जाता है कि साक्षरता, जनसंख्या और स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं तब तक हल नहीं होंगी जब तक कि लैंगिक पूर्वाग्रह का कोई समाधान नहीं निकाला जाता ताकि महिलाएं एक ऐसे समाज और समुदाय के निर्माण में स्वतंत्र रूप से भाग ले सकें यदि हम इस बात पर अधिक ध्यान दें कि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक भारत में महिला सशक्तिकरण को कैसे गति मिली। समय के साथ, जब महिलाओं को सशक्त बनाने की बात आई तो भारतीय समाज ने कई उतार-चढ़ाव देखे हैं।

महिला सशक्तिकरण : महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार पुरुषों के लिए एक अनुष्ठान रहा है, सदियों से यह अन्यायपूर्ण व्यवहार चल रहा है, और महिलाओं को संपत्ति रखने की अनुमति नहीं है, उन्हें अपने माता-पिता की संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं मिलेगा, और उन्होंने वोट देने के अपने अधिकारों का कभी आनंद नहीं लिया। और उन्हें अपनी जीवनशैली या नौकरी वगैरह चुनने की बिल्कुल भी आज़ादी नहीं थी। अब महिला सशक्तिकरण का अर्थ है अपनी शक्ति और अपने कार्यों का प्रयोग करना। जिसका अर्थ है अपनी भौतिक संपत्तियों, बौद्धिक संसाधनों और अपनी विचारधाराओं पर नियंत्रण रखना। प्राचीन भारतीय काल और महिला सशक्तिकरण प्राचीन भारतीय संस्कृति में महिलाओं को पुरुषों के बराबर माना जाता था और लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाता था, इसके बजाय महिलाओं को समाज द्वारा सम्मानित किया जाता था, और उस समय समाज महिलाओं को जननी मानता था जिसका अर्थ है माँ, हिन्दू धर्मग्रन्थों में भी नारी को देवी माना गया है। वे अपने पूर्ण बुनियादी अधिकारों का आनंद लेते थे जहाँ वे शिक्षा प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र थे, उस समय ऋषियों की पत्नियाँ अपने पतियों के साथ आध्यात्मिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए तैयार हो सकती थीं, उन्हें अर्धांगिनी (बेटर हाफ) के रूप में भी जाना जाता था। उस काल में स्त्रियों को भी पुरुषों के समान ही समान जीवन जीने को मिलता था। भारतीय इतिहास में महिलाएँ अपने जीवन में दो चीज़ों से गुज़री हैं, एक है अधीनता और मुक्ति। समय के साथ-साथ उनकी स्थिति भले ही बदल गई हो, लेकिन वैदिक युग में वे नश्वरता और आदर्शों के पूर्ण रक्षक और संरक्षक के प्रतीक थे।

गार्गी, मैत्रेयी, सीता, द्रौपदी और अलापा की उपलब्धि इस युग की महिलाओं के लिए सबसे आदर्श भूमिका बन जाती है। ये महिलाएँ कई क्षेत्रों में पुरुषों के साथ प्रतिस्पर्धी थीं और उन्हें अपने अधिकार और समानता भी प्राप्त थीं और उनका आनंद भी लेती थीं, उन पर कोई प्रतिबंध नहीं था और उनके पास अपार धन और संपत्ति थी। इसके साथ-साथ जब अपनी संतानों का मार्गदर्शन करने की बात आती थी तो वे बहुत सशक्त भूमिका निभाते थे।

वेदों के प्राचीन पाठ में, मनुष्य की अवधारणा समाज के लिए आधार है, तैत्तिरीय संहिता में महिलाओं और पुरुषों को गाड़ी के दो पहिया के रूप में माना गया था। वेदों द्वारा समाज को दी गई ये शिक्षाएँ पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के अच्छे उदाहरण थीं।

मध्यकाल में भारत में महिला सशक्तिकरण प्रारंभिक वैदिक काल में लिंगों के बीच अखंडता की गुंजाइश थी, लेकिन बाद के वैदिक काल में किसी तरह उनके बीच अखंडता और समानता में गिरावट आई, विशेषकर महिलाओं की स्थिति जो प्रारंभिक वैदिक काल में समान थी, बाद में नीचे की ओर गिर गई। उत्तर वैदिक काल में

प्रवृत्ति. ऐसा माना जाता है कि उस युग में महिलाओं की स्थिति में गिरावट का मुख्य कारण विदेशी विजय थी। निष्पक्षता और सद्भाव के ऋग्वैदिक आदर्शों में क्षरण हुआ, जो महिलाओं को वेदों का अध्ययन करने, वैदिक मंत्रों का पाठ करने और वैदिक अनुष्ठानों का अभ्यास करने के अपने अधिकार का आनंद लेने से वंचित करता है। महिलाओं को शादी करने या घरेलू जीवन में शामिल होने और अपने पतियों के प्रति अटूट समर्पण रखने के लिए मजबूर किया गया। उस समय माता-पिता को कन्या के जन्म पर शर्म आती थी।
एक समय ऐसा आया जब महिलाओं को शरीर को ढकने वाला घूंघट 'पर्दा' अपनाना पड़ा, जिससे उनकी स्वतंत्रता पर असर पड़ा। यही कारण है कि इसने समाज में कई अन्य बुराइयों को जन्म दिया जिससे महिलाओं का जीवन जीना और भी कठिन हो गया। सती प्रथा, जौहर और लड़कियों के लिए शिक्षा न होना, विधवा पुनर्विवाह, बाल विवाह और भी बहुत कुछ जैसे कई प्रतिबंध थे।

सती: सती प्रथा के अनुसार जब किसी महिला का पति मर जाता है तो महिला को अपने पति के साथ जलती हुई आग पर बैठना पड़ता है और खुद को जला लेना पड़ता है। ऐसा कहा जाता है कि यह अपने पति के प्रति उसका गंभीर कर्तव्य था। पुरानी हिंदू लिपियों में यह माना जाता था कि जब एक महिला सती होकर मरती है, तो उसके लिए सीधे स्वर्ग के दरवाजे खुल जाते हैं।

जौहर: आज की दुनिया में, अगर हम यह समझने की कोशिश करें कि जौहर क्या है, तो हमें पता चलता है कि यह सिर्फ एक सामूहिक आत्महत्या है, लेकिन मध्ययुगीन काल में, यह एक राजपूत प्रथा थी, जहाँ राजपूत महिलाएँ अपने पतियों के लिए अपने प्राणों की आहुति देती थीं। एक लड़ाई हारने वाला हूँ.

बाल विवाह: मध्यकालीन भारत कई कारणों से याद किया जाता है लेकिन उनमें से एक है बाल विवाह। उस समय लड़कियों का जन्म माता-पिता के लिए शर्म की बात होती थी, उन्हें परिवार के लिए बोझ माना जाता था, इसलिए माता-पिता जल्द से जल्द उनकी शादी कर देते थे। बाल विवाह का एक अन्य कारण यह है कि यह मान्यता थी कि बड़ी हो चुकी लड़कियाँ घोटाले करने में अधिक प्रवृत्त होती हैं, यही कारण है कि उनके माता-पिता बहुत ही कम उम्र में शादी कर देते हैं और लड़कियाँ अपने माता-पिता के घर पर रहती हैं और जब वे परेशान होते हैं तो बाहर चली जाती हैं। तरुणाई। उस समय पुरुषों को लगता था कि महिला शादी के सामान से ज्यादा कुछ नहीं है, उनके साथ सामान की तरह व्यवहार किया जाता था। यही कारण है कि जन्म दर में वृद्धि हुई, महिलाओं को बहुत खराब स्वास्थ्य का सामना करना पड़ा, जो महिलाओं और शिशुओं में उच्च मृत्यु दर में वृद्धि का भी एक कारण है।
विधवा पुनर्विवाह की कोई पहुंच नहीं, मध्ययुगीन काल में महिलाओं के साथ सामग्री जैसा व्यवहार करना आम बात थी। मध्ययुगीन काल में विधवाओं को शापित माना जाता था, ऐसा माना जाता था कि जब कोई महिला विधवा हो जाती है तो वह अपमान सहती है और दुर्भाग्य लाती है, विधवा होने के बाद उस महिला को घर की हर सुख-सुविधा का त्याग करना पड़ता है जिसका वादा उसके पति ने शादी के समय किया था। , किसी भी पवित्र या पवित्र अनुष्ठान या स्थान में विधवाओं के लिए कोई जगह नहीं है। उन्हें पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी उसे शांतिपूर्ण जीवन जीने के लिए कोई विकल्प नहीं दिया जाएगा, इस बात के प्रमाण उपलब्ध हैं कि अतीत में महिलाओं को शिक्षा तक पहुंच प्राप्त थी, लेकिन उत्तर वैदिक काल में परिदृश्य पूरी तरह से बदल गया, उनकी शिक्षा का आयाम बदल गया और उन्हें सभी घरेलू कार्य सिखाए जाने लगे, दूसरी ओर मुस्लिम धर्म में उन्हें ललित कला पर कक्षाएं दी गईं। फिर भी इस दौर में महिलाओं की पीड़ा कभी आसान नहीं होती।

आधुनिक काल में भारत में महिला सशक्तिकरण: फिर जैसे-जैसे समय बीतता गया, समाज बदलावों के साथ विकसित हुआ और किसी तरह महिलाओं को अपने अधिकारों और शक्तियों का आनंद लेने का मौका मिला, लेकिन यह समाज की हर महिला के लिए उपलब्ध नहीं था। भारत में महिला सशक्तिकरण के इस आधुनिक दौर की शुरुआत में ही ईस्ट इंडिया कंपनी के समय कई नाम सामने आते हैं। वे उस समय असाधारण रूप से बहादुर महिलाएं थीं जैसे बेगम हज़रत महल, उदा देवी और अज़ीज़ुन बायल, उनमें से एक झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई भी हैं। धीरे-धीरे भारत में महिला सशक्तिकरण की ये लड़ाई मजबूत होती गई। **सामाजिक सुधार हुए हैं और राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानंद और स्वामी दयानंद सारस्वत जैसे कई लोगों ने उनमें भाग लिया**। इन सभी ने महिलाओं को समाज में उनकी पिछली स्थिति वापस पाने में मदद की थी।

इस सशक्तिकरण की उत्पत्ति और इसकी अवधारणा 1960 में संयुक्त राज्य अमेरिका के नागरिक अधिकार आंदोलनों में सामने आई थी। सशक्तिकरण की परिभाषा के बारे में अधिक विशिष्ट होने के लिए इसे व्यापक रूप से किसी के नियंत्रण और जिम्मेदारी लेने की एक बड़ी व्यक्तिगत प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है। जीवन और परिस्थितियाँ भी उन्हें उनके मानवाधिकार और सामाजिक न्याय प्रदान करती हैं।

पिछले कुछ सहस्राब्दियों में भारत में महिलाओं की स्थिति में बहुत बदलाव आया है। पूरे विश्व में पूरी 19वीं सदी को एक अर्थ में महिलाओं की सदी कहा जाता है। पूरी दुनिया में महिलाओं की शिक्षा एक विवादास्पद प्रश्न बन गई, जो हाल ही में चर्चा का विषय नहीं था, लेकिन किसी तरह पश्चिमी दुनिया का भारत में महिला सशक्तिकरण पर कुछ प्रभाव पड़ा।

हमने भारत में लड़कियों की शिक्षा के चलन के बारे में जाना, ऐसा लगता है कि समय के साथ इसकी लहर ऊपर-नीचे होती रही है। मध्यकाल की सामाजिक स्थिति में स्त्री शिक्षा का मात्रात्मक विस्तार नहीं हो सका। लेकिन अभिजात वर्ग के बहुत ही सीमित दायरे में रहते हुए भी गुणात्मक उत्कृष्टता कायम रही। यह निम्न प्रवृत्ति 19वीं सदी की शुरुआत तक अपरिवर्तित रही, एक मजबूत सामाजिक कलंक था कि महिलाएं भारत में शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकतीं।

ब्रिटिश शासकों तथा इंग्लैण्ड तथा यूरोप के अन्य भागों से आये मिशनरियों की गतिविधियों ने भारतीयों के सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन में कुछ परिवर्तन किये। मिशनरी महिला शिक्षा के पक्ष में थे और उन्होंने कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास में लड़कियों के लिए कई स्कूल स्थापित किए। सरकार की पहल उल्लेखनीय थी. 19वीं शताब्दी में भारत में लड़कियों की शिक्षा ने बहुत प्रचार किया और पितृसत्तात्मक मानदंडों का विरोध किया जो उनकी शिक्षा के विरुद्ध थे। महिलाओं की शिक्षा के लिए विभिन्न शिक्षा समितियों की सिफारिश की जाती है। 1854 के शिक्षा डिस्पैच में महिला शिक्षा पर भारी दबाव बनाया गया। इसके परिणामस्वरूप भारत के विभिन्न हिस्सों में कई लड़कियों के स्कूल स्थापित किए गए।

स्वतंत्रता के बाद भारत में महिला सशक्तिकरण: आज़ादी के बाद भारत में महिला सशक्तिकरण के आंदोलन धीमे हो गए। बहुत सारी महिलाएँ अपने घरों को वापस चली गईं क्योंकि उपनिवेशवादियों के खिलाफ लड़ने की कोई ज़रूरत नहीं थी। अन्य लोग संतुष्ट थे कि परिषद ने उन्हें समानता का वादा किया, समान नागरिक संहिता (अनुच्छेद 44) की आशा रखी, और सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार दिया जिससे उनकी समस्या और कम हो गई। इससे उत्पीड़न, भेदभाव, दहेज हत्या, बेरोजगारी, घटता लिंगानुपात, स्वास्थ्य देखभाल की कमी और शिशु मृत्यु दर आदि की दर में वृद्धि हुई। पूरे भारत में सामाजिक-राजनीतिक अशांति थी। जिसके परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र द्वारा भारत में महिलाओं की स्थिति पर सीएसडब्ल्यूआई समिति की नियुक्ति की गई। आजादी के 30 साल और संविधान लागू होने के बाद भी भारत में महिला सशक्तिकरण में सुधार के लिए कुछ खास नहीं किया गया। उनकी

स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, रोजगार और अन्य क्षेत्रों में लापरवाही बरती गई। महिलाओं की राजनीतिक और आर्थिक भागीदारी बहुत कम थी।

मानवाधिकारों का मूलमंत्र समकालीन समय में सक्रियता के प्रयास से लेकर हमारी रोजमर्रा की शब्दावली में शामिल हो गया है, मानवाधिकार आज शिक्षा, राजनीति, कानून और क्षेत्र में चर्चा, विचार-विमर्श, बहस, आलोचना और विश्लेषण का विषय है। नीति निर्माण। मानवाधिकार बुनियादी और प्राकृतिक अधिकार हैं जो किसी व्यक्ति के मनुष्य होने के आधार पर होते हैं, न कि किसी विशेष देश में उसकी नागरिकता के आधार पर। मानवाधिकार सभी लोगों के लिए समान गरिमा सुनिश्चित करता है।

महिलाओं के मानवाधिकार मानवाधिकारों को देखने के शुरुआती बिंदु के रूप में महिलाओं के अनुभवों से शुरू होते हैं। नारीवादी विश्लेषण और अधिकार अधिवक्ताओं का कहना है कि लिंग परिप्रेक्ष्य के आधार पर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और कानूनी संरचनाएं और प्रक्रियाएं महिलाओं के जीवन के अनुभवों पर एक दृष्टिकोण रखती हैं। महिला अधिकार आंदोलनों के वैश्विक प्रयास को उजागर करना आसान नहीं है। महिलाओं के अधिकार का मतलब केवल महिलाओं की स्थिति और उनके प्राकृतिक जीवन का सुधार और पुनर्निर्माण तथा पुनःप्राप्ति नहीं है। महिलाओं के मानवाधिकारों को दो तरीकों से समझाया जा सकता है, एक है मानवाधिकारों के सामान्य साधन, जिसमें बिना किसी भेदभाव का सिद्धांत है जो सभी पर लागू होता है जिसमें महिलाएं भी शामिल हैं, दूसरा अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार कानून में लिंग-विशिष्ट प्रावधानों को संदर्भित करता है। महिलाओं द्वारा सभी प्रकार की हिंसा और भेदभाव का अनुभव स्थानीय स्तर पर ही हुआ, यह इसलिए आसान था क्योंकि महिलाओं को कभी भी बुनियादी शिक्षा नहीं मिली थी ताकि वे खुद को भेदभाव और हिंसा से बचा सकें। यदि महिलाएँ निम्न वर्ग की हों तो उन्हें उनके लिंग के आधार पर शिक्षा के अधिकार से वंचित कर दिया जाता था, लेकिन साथ ही उच्च वर्ग की लड़की के लिए शिक्षा के अधिकार की संभावना कम होती थी।

हालाँकि, राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन एक अन्य कारक था जो महिलाओं की शिक्षा के खिलाफ था। यह एक मानवतावादी आंदोलन भी था. मानवतावादी दृष्टिकोण से धर्म, वर्ग, जाति और अन्य हठधर्मिता का उन्मूलन हुआ। ब्रम्हो आंदोलन के विकास के साथ लड़कियों की शिक्षा में तेजी से विकास हुआ। स्वतंत्रता के बाद भारत में महिला सशक्तिकरण के गुणात्मक और मात्रात्मक पहलुओं में सुधार के लिए कई उपाय किए गए।

महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन (सीईडीडब्ल्यू) संयुक्त राष्ट्र संगठन (यूएनओ) की सबसे महत्वपूर्ण पहलों में से एक है। यह महिलाओं के खिलाफ हिंसा और भेदभाव का विरोध करता है, इसने महिलाओं के मानवाधिकारों और पुरुषों और महिलाओं के बीच कानूनी और राजनीतिक समानता को बहाल करने का वादा किया है। महिलाओं को सशक्त बनाने का यह दीर्घकालिक प्रयास 1940 के दशक में शुरू हुआ।

राजनीति और अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका: राजनीति और अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका भारत में महिला सशक्तिकरण का सबसे प्रभावी और महत्वपूर्ण चरण है। इतने सारे सुधारों, अधिनियमों और कानूनों के कार्यान्वयन के बाद अंततः महिलाओं को राजनीतिक रूप से अपना प्रतिनिधित्व करने का मौका मिला। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण को उनके वास्तविक सामाजिक सशक्तिकरण में बदलना बहुत कठिन कार्य था क्योंकि किसी तरह यह पता चला था कि स्थानीय निकायों में महत्वपूर्ण जनसमूह के अस्तित्व के बावजूद, विधायिका में महिलाएँ अभी भी लैंगिक हिंसा के प्रति संवेदनशील थीं। महिलाओं की राजनीतिक भूमिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में कभी कोई बदलाव नहीं आया लेकिन पितृसत्ता अभी भी राजनीतिक दुनिया में महिलाओं के लिए बाधाएँ पैदा करने में कुटिलता से सक्रिय है। इसके अलावा, महिलाएं सभी वर्गों, जातियों, जातीयताओं आदि के

साथ-साथ स्थानीय निकायों में विधायिका में अधिक प्रतिनिधियों की हकदार हैं। यह लोकसभा में महिला सदस्यों की अग्रणी भूमिका से सुनिश्चित हुआ जब उन्होंने घरेलू सहायिका, जो हमारे समाज के सबसे कमजोर वर्गों में से एक है और रोजगार की परिभाषा से बाहर है, को 'यौन उत्पीड़न के खिलाफ महिलाओं की सुरक्षा' में शामिल किया। 2011 में 'एट वर्कप्लेस बिल'।

भारत में अर्थव्यवस्था और महिला सशक्तिकरण की अवधारणा एक-दूसरे पर निर्भर हैं। अपने जीवन पर नियंत्रण पाने के लिए। भारत के आर्थिक विकास में महिलाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, वे कई दशकों से मजबूर मजदूर के रूप में इसमें भाग ले रही हैं और उन्हें बहुत कम वेतन दिया जाता है। लगभग सभी देशों में राष्ट्र की आर्थिक भलाई में महिलाओं के योगदान को अभी भी राष्ट्रीय आय लेखांकन में अनदेखा किया जाता है।

महिलाएं देशों, पीढ़ियों और कई अन्य लोगों के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन में बहुत बड़ा योगदान देती हैं। इसलिए आर्थिक विकास संसाधनों पर महिलाओं के नियंत्रण और निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी पर सकारात्मक प्रभाव दिखा सकता है, लेकिन वास्तविकता यह है कि महिलाएं आर्थिक दबाव के अधीन हैं।

लेकिन अब आधुनिक समय में, जिस तरह से भारत में महिलाएं अपने सशक्तिकरण का प्रयोग करती हैं, उसने पिछले परिदृश्य की तुलना में परिदृश्य को काफी हद तक बदल दिया है। उन्होंने अपने स्वयं सहायता समूह शुरू किए हैं, कारखानों में काम करते हैं और उनका अपना व्यवसाय है। इसके साथ ही भारत में महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई कानून और अधिनियम क्रियान्वित किये गये।

निष्कर्ष: महिला सशक्तिकरण की मांग यह स्पष्ट करती है कि प्रत्येक मनुष्य के साथ ऐसा व्यवहार किया जाना चाहिए जिससे उनकी गरिमा और अधिकारों का उल्लंघन न हो। सदियों से महिलाएँ इस उत्पीड़न से पीड़ित रही हैं, जहाँ उनका अस्तित्व केवल भौतिक से अधिक कुछ नहीं है, लेकिन जैसे-जैसे दुनिया विकसित हुई है और महिलाएँ अब अपने अधिकारों के लिए लड़ सकती हैं, महिलाओं के कुछ वर्ग ऐसे हैं जिनके पास प्रकाश है अभी तक उद्यम नहीं किया गया है. एक सभ्य दुनिया में रहने के लिए एक इंसान के रूप में यह हमारा कर्तव्य है कि हम लोगों को जागरूक करने में मदद करें और उन्हें किसी भी हठधर्मी मानसिकता से बाहर निकालें जहां यह समाज को आगे बढ़ने में नुकसान पहुंचाती है। हमें अपनी महिलाओं और बच्चों को शिक्षित करना चाहिए ताकि वे आने वाली पीढ़ियों तक विरासत को आगे बढ़ा सकें और राष्ट्र के निर्माण में भाग ले सकें।

संदर्भ:

1. नए भारत के लिए रणनीति, https://www.niti.gov.in (अंतिम बार 23 अप्रैल, 2022 को देखा गया)
2. महिला सशक्तिकरण योजनाएं, https://wcd.nic.in (अंतिम बार 24 अप्रैल को देखा गया), 2022)
3. जुगल किशोर मिश्रा, भारत में महिलाओं का सशक्तिकरण, 4, द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 867, 872-878, (2006)
4. मुद्रा, https://www.mudra.org.in (अंतिम) 26 अप्रैल, 2022 को दौरा किया गया)
5. कामकाजी महिला छात्रावास, https://wcdhry.gov.in (अंतिम बार 27, 2022 अप्रैल को देखा गया)
6. भारतीय कॉन्स्ट। कला 14, 15(3)
7. भारत की जनगणना, https://censusindia.gov.in (अंतिम बार 29 अप्रैल 2022 को देखा गया)